IJFANS INTERNATIONAL JOURNAL OF FOOD AND NUTRITIONAL SCIENCES
ISSN PRINT 2319 1775 Online 2320 7876
Research Paper © 2012 IJFANS. All Rights Reserved UGC CARE Listed (Group -I) Journal Volume 11, Iss 11A, 2022

शोध सारांश–

पं. दीनदयाल उपाध्याय कृत उपन्यास सम्राट चन्द्रगुप्त का उद्देश्य एवं भाषा शैली

की–वर्ड–उपन्यास, चन्द्रगुप्त सम्राट, राष्ट्र निर्माण, साहित्य, मगधेश, नव प्रतिभा

–डॉ. ओम मिश्र
–शरद कुमार मिश्र

पं. दीनदयाल उपाध्याय 'सम्राट चन्द्रगुप्त' नामक इस उपन्यास में भारत के उज्जवल अतीत का गुणगान किया है। नाटक का उद्देश्य राष्ट्र निर्माण है इस राष्ट्र निर्माण की नींव का निर्माण पं. दीनदयाल उपाध्याय ने अपनी नव–नवोन्मेष शालिनी की प्रतिभा के बल पर किया है। और इस नींव पर दीवार उठाने का प्रयत्न किया है। उन्होंने नवीन पीढ़ी, उन नौनीहालों के मस्तिष्क को सुधरने, संवारने, संस्कारित करने की बात भी इस रचना में की है। जो राष्ट्र, वास्तव कल के राष्ट्र निर्माणक होंगे।

पं. दीनदयाल उपाध्याय का उद्देश्य सशक्त भारत का निर्माण करना था। इसके लिए उन्होंने पूर्ण योजना बना रखी थी। इसके लिए उन्होंने मूलतः संस्कार सम्पन्न नई पीढ़ी तथा राष्ट्रभक्ति प्रथम मानने वाले युवक युवतियों के निर्माण पर बल दिया तथा उन्होंने ऐसी शिक्षा व्यवस्था पर जोर देने का ढाचा खींचा था जो स्व के स्थान पर स्वदेश प्रेम पर ज्यादा केन्द्रित हो।

उपन्यास में उन भारत भूमि के वीरों को याद किया गया है जो हिंदुस्तान के उथान में अपने प्राणों को उत्सर्ग कर अपने को बलिदान कर स्वर्ग लोक चले गए उन्होंने अपने जीवनी शक्ति से देश का उत्थान किया देश को नई दिशा दी–''पुण्यमयी भारतभूमि की विशाल ऐतिहासिक परंपरा में वैभव और पराभव, उत्कर्ष और अपकर्ष के अनेक कालखंड मिलते हैं। उन्नति और अवनति दोनों ही में उसने अपनी राष्ट्रीय चेतना को जाग्रत् रखा है, दोनों ही स्थितियों में अपनी आत्मा को बलवती बनाया है।'' पराभव प्राप्त होने पर उसने कालचक्र की गति को भी बदलने वाले उन कर्मठ वीरों को जन्म दिया, जिन्होंने अपनी मनस्विता, स्वाभिमान एवं नीति–निपुणता के द्वारा राष्ट्रीय आत्मा की सुप्त शक्ति को जगाया। यह शक्ति अन्याय और अत्याचार की भीषण आँधी में भी अपने स्थान पर शांत मुद्रा से डटी रही और अगस्थ्य के समान कठिनाइयों के अलं?य विंध्याचल का अतिक्रमण करके समुद्र जैसी उद्दंड ,वं विशाल शक्ति को भी तीन ही चुन्न में पान करने में समर्थ हुई। इसी प्रकार इसके वैभव और शांति के काल में वे तत्त्वज्ञ हु, जिन्होंने आत्मा की ईश्वरीय शक्ति का साक्षात्कार करके मानव के कल्याण के लि, सत्य सिद्धांतों का प्रतिपादन किया।[1]

चंद्रगुप्त और चाणक्य दो भारत के ऐसे महानुभाव हुए कुछ एक गलतियों के अलावा उन्होंने समाज निर्माण का जो कार्य किया वह भी अतुलनीय है। उपन्यास में चन्द्रगुप्त के इस कार्य का साहित्यक निरूपण उपन्यासकार पं. दीनदयाल उपाध्याय ने किया है–''ऐसा ही एक कालखंड आज से 2400 वर्ष पूर्व हमको मिलता है। इसमें चंद्रगुप्त और चाणक्य के सम्मिलित प्रयत्नों ने समाज की उस रचनात्मक शक्ति का सृजन किया, जिसने न केवल अलिक्सुंदर को ही भारत से निकाल बाहर किया, अपितु एक विशाल साम्राज्य का भी निर्माण किया।''[2]

प्रत्येक काम को करने से पूर्व उसकी कार्य योजना बनाना अत्यंत आवश्यक है बिना कार्य योजना उसे यथार्थ/रातल पर लाना बहुत कठिन होता है चाणक्य व चंद्रगुप्त ने इसी योजना को साकार किया–''चंद्रगुप्त और चाणक्य ने कल्पना के मनोराज्य में जिस विशाल साम्राज्य का मानचित्र खींचा था, उसे एक ने अपनी अजेय शक्ति तथा दूसरे ने अपनी असाधारण प्रतिभा के बल पर प्रत्यक्ष जगत् में प्रकट कर दिखाया। अलिक्सुंदर के आक्रमण का भारत में प्रत्येक स्थान पर विरोध हुआ और देश में इतनी शक्ति थी कि वह पश्चिम के महान् विजेता युद्ध को पराभूत कर सकी; परंतु फिर भी भारत पूर्णतः शक्तिशाली नहीं था। समाज असंगठित, विशृंखल तथा व्यक्तिनिष्ठ था। इन अवगुणों के कारण देश की बढ़ती हुई दुर्बलता चंद्रगुप्त और चाणक्य से न छिप सकी, क्योंकि वे थे देश की नाड़ी पहचानने वाले चतुर वैद्य। देश की आत्मा के साथ अपनी आत्मा को समरस करने के कारण दुर्बलता की वेदना को उन्होंने अनुभव किया। पर्वतक की विशाल शक्ति, जिसने अलिक्सुंदर के छक्के छुड़ा दिए और उसे मैत्री का हाथ बढ़ाने को विवश किया तथा मगध का अजेय सैन्यबल, जिसकी वीरता और शूरता की कहानियाँ सुनकर ही आलिक्सुंदर की सेना हिम्मत हार बैठी।''[3] तत्कालीन समाज की कमियों कि ओर

भी इशारा करता है–ये दोनों ही वास्तव में राष्ट्रीय दृष्टि से कितनी खोखली थीं, यह चंद्रगुप्त और चाणक्य जानते थे। इसीलिए उन्होंने भारत के दौर्बल्य को दूर करके इसे शक्तिशाली बनाने का बीड़ा उठाया।

चंद्रगुप्त और चाणक्य को अपने देश की कमियों को दूर कर उसे शक्तिशाली बनाने का कार्य करना था वह उन्होंने किया। इसके लि, उसने विभिन्न साम्राज्य के ऊपर विजय भी प्राप्त की–''भारत के संपूर्ण छोटे–बड़े राज्यों की विजय तथा भारत की सीमा से उसके शत्रुओं को पर्याप्त दूर रखने के लिए गांधार (अफगानिस्तान) पारस (ईरान) चीनी तुर्किस्तान (पूर्वी तुर्किस्तान) कुस्तान (खोतान) आदि की विजय भारत को वैभव के शिखर पर पहुँचाने वाले शक्ति–सोपान की पहली सीढ़ी थी। विजय के पश्चात् साम्राज्य में शांति ,वं सुव्यवस्था निर्माण करना इस मार्ग की दूसरी सीढ़ी थी।''[4]

विदेशी राजा भी चंद्रगुप्त की शाशन कला के कायल थे। ''चंद्रगुप्त मौर्य का साम्राज्य इतना सुसंगठित तथा शासन इतना सुदृढ़ था कि विदेशी यवनों को भी उसकी प्रशंसा करनी पड़ी। उसके शासनकाल की शांति, व्यवस्था और संपन्नता का चित्र सेलेउक् के दूत मेगस्थने के वर्णन के जो अंश उपलब्ध हैं, उन्हीं के आधार पर खींचा जा सकता है।''[5]

चंद्रगुप्त ने अपनी शासन सीमा का प्रबंधन बहुत ही सुचारू और सुरूचिपूर्ण से किया था–''यथार्थ स्वरूप कितना भव्य होगा, इसकी तो केवल कल्पना कर सकते हैं। चंद्रगुप्त की राजधानी पाटलिपुत्र थी। इसका विस्तार गंगा के किनारे व पाँच मील था। राजधानी की विशालता, स्वच्छता एवं वैभव को देखकर ही साम्राज्य के वैभव का अनुमान लगाया जा सकता था। नगर में 450 तो रत्नखचित अट्टालिकाँ, ही थीं। फिर राज प्रासाद की शोभा और रत्नभंडार का तो कहना ही क्या! पण्यवीथिकाओं की स्वच्छता और सजावट अत्यंत ही चित्ताकर्षक थी। छोटी–छोटी गलियों में भी स्वच्छता का समुचित प्रबंध था। पाटलिपुत्र उस समय के संसार का प्रमुख नगर था। वहाँ न केवल दूर के व्यापारी ही वाणिज्य व्यवसाय के लिए आते थे, परंतु संसार के सभी राज्यों के राजदूत भी चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में उपस्थित रहते थे।''[6]

कुशल शासन प्रबंधकला चन्द्रगुप्त में कूट–कूट कर भरी थी। उसने अपने शासन को प्रबंधन के कारण विभिन्न वर्गों में विभाजित किया। वास्तुकला नगर का ढाचा सड़कों की योजनाएं भी प्रबधंन पूर्ण थी–''अपने विशाल साम्राज्य का शासन करने के निमित्त चंद्रगुप्त मौर्य ने उसे पाँच भागों में विभक्त कर रखा था। पूर्वीय भाग का शासन तो राजधानी पाटलिपुत्र से ही होता था, परंतु उत्तर में तक्षशिला और कौशांबी, मध्य भारत में उज्जयिनी (उज्जैन) तथा दक्षिण में महिशर (मैसूर) प्रतिनिधि–शासन के केंद्र थे। प्रत्येक प्रांत तथा केंद्र में शासन मंत्रियों की एक परिषद् के द्वारा होता था। सम्राट् स्वयं समय–समय पर साम्राज्य भर में दौरा करते थे। देश भर में स्थानीय शासन का भार ग्राम पंचायतों के ऊपर था। नगर में आज की भांति ही स्थानीय शासन–संस्थाएँ (मुनिसपैलिटियाँ) कार्य करती थीं। स्वच्छता पर इतना अधिक ध्यान दिया जाता था कि सड़कों पर गंदा पानी पफेंकने वालों के लि, बड़े कठिन दंड देने की व्यवस्था थी। नगर के समस्त गृह योजनानुसार बनवाए जाते थे तथा घर बनवाने के पहले स्वास्थ्य. अधिकारी की अनुमति प्राप्त कर लेना आवश्यक था। आज के बड़े–बड़े नगरों की भांति पाटलिपुत्र घिचपिच नहीं बसा हुआ था।''7

चन्द्रगुप्त मौर्य ने सड़क परिवहन का जाल राज्य भर में फैलाया था जो एक अच्छे राजा की निशानी है। एक अच्छा राजा अपने प्रजा की भलाई के लिए ही कार्य करता है जिससे वह जनप्रिय और युग–युगीन राजा बन जाता है। चन्द्रगुप्त में यह सारे गुण विद्यमान थे। राजा कैसे अपने प्रजा जनों के धार्मिक कार्यों के लिए उचित प्रबंध कर सकता है। इसका वर्णन भी उपन्यास में सर्वथा दृष्टिगोचर होता है–''भारत में कई बड़ी–बड़ी सड़कें मौर्य शासन में बनीं। उनके दोनों ओर छायादार वृक्ष लगवाए गए थे तथा थोड़ी–थोड़ी दूर पर यात्रियों के ठहरने के लिए धर्मशालाँ, और कुएँ बने थे। भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक वणिकगण निर्भय होकर अपना सामान ले जाते थे। चोरी और डाके का भय पूर्णतः जाता रहा था। नगर में लोग घरों में ताले नहीं लगाते थे। इतना ही नहीं, किसी की चोरी होने पर राजकर्मचारी उसका पता न लगा सकें तो राज्यकोष से उसकी क्षति पूरी कर दी जाती थी। सत्य तो यह है कि जब सब प्रकार की सुव्यवस्था और संपन्नता थी, तब कोई चोरी जैसे गर्हित, शास्त्रनिषिद्ध, लोकविघातक एवं लोकनिंद्य कर्म की ओर प्रवृत्त ही क्यों होता? राज्य में न्याय का समुचित प्रबंध था। न्याय और शासन–विभाग का कार्य अलग–अलग अधिकारी देखते थे।''8 एक महान राजा के गुण चन्द्रगुप्त में विद्यमान थे वह एक न्यायप्रिय राजा था–''न्याय के सामने सब समान थे। यहाँ तक कि

राजपुत्र को भी, यदि वह दोषी हो तो दंड दिया जाता था। समाज–विघातक कार्यों के लिए तो बहुत ही कठिन दंड दिया जाता था। सम्राट् चंद्रगुप्त मौर्य स्वयं न्याय करता था। इसके लिए प्रजा का प्रत्येक व्यक्ति सम्राट् तक पहुँच सकता था।''

एक शासन प्रबंधन में शिक्षा व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसमें उच्चशिक्षा, माध्यमिक और प्राथमिक सभी प्रकार की शिक्षा सम्मिलित है। चन्द्रगुप्त ने उच्च शिक्षा की पूर्ण व्यवस्था अपने राज्य में कि थी–''ज्ञान और विद्या के प्रसार की ओर भी सम्राट् चंद्रगुप्त मौर्य ने विशेष ध्यान दिया था। तक्षशिला और नालंदा के विश्वविद्यालय तो चलते ही थे, परंतु समाज और राष्ट्र के हित के प्रश्नों का निर्णय करने के लिए स्थान–स्थान पर परिषदें होती थीं, उनमें विद्वानों को यथेष्ट रूप से पुरस्कृत किया जाता था। समाज में समष्टि जीवन की भावना राष्ट्र के जीवन का मूल है, यह सम्राट् चंद्रगुप्त को विदित था। इसके लिए भिन्न–भिन्न प्रचार–साधनों का उपयोग तो होता ही था, परंतु कई बातों के लिए तो राज्य की ओर से विशेष नियम बने हुए थे। पड़ोस में आग लगने पर यह समष्टिगत कर्तव्य है कि उसको बुझाने में सहायता दी जाए। इस कर्तव्य की अवहेलना करने वाले को राज्य की ओर से कठिन दंड दिया जाता था। नहर, तालाब आदि के सार्वजनिक उपयोग के कार्यों में भी सबको सहायता करनी ही होती थी।''[9] देश में इस प्रकार शिक्षा व्यवस्था होनी चाहि, जो अपने काल, देश की परिस्थितियों के अनुरूप हो क्योंकि दूसरे देश की शिक्षा की नकल कर उस पद्धति का अनुकरण सपफलता प्रदान करने में मदद नहीं कर पाता है–''देश मैं इस प्रकार की शिक्षा–दीक्षा का प्रबंध था कि लोग व्यक्तिगत हितों के स्थान पर समाज के हितों को ही महत्त्व देते थे।''[10]

उन लोगों को शर्म करनी चाहिए जो इस बात की दुहाई देते रहते है सब ज्ञान यूरोप की ही देन है उन्हें चंद्रगुप्त जैसे राजा के राज्य प्रबंधन से सीख लेनी चाहिए। जो भारतीय है यदि चंद्रगुप्त की राज्य व्यवस्था या प्रबंधन उच्चकोटी का नहीं था तो विदेशी विद्वान लोगों ने अपनी इतिहास की पुस्तकों में उसके राज्य प्रबंधन की प्रशंसा क्यों की है–''सम्राट् चंद्रगुप्त की शासन–व्यवस्था इतनी निर्दोष एवं पूर्ण थी कि पश्चिमी विद्वानों को भी उसकी मुक्तकंठ से प्रशंसा करनी पड़ी है। प्रत्येक अच्छी बात का उद्‌गम यूरोप से मानने वालों को आश्चर्य होता है कि आज से चौबीस सौ वर्ष पूर्व मौर्य शासन इतना विकसित स्वरूप कैसे उपस्थित कर सका। आज के विज्ञान के आविष्कारों के न होते हुए भी सम्राट् चंद्रगुप्त मौर्य ने शासन की आधुनिकतम प्रणालियों का उपयोग किया।''[11] जबकि देशी विद्वानों की नजरों में आज उसकी कोई अहमियत नहीं है विदेशी ज्ञान की दुहाई देते है ऐसा ही इन्डोलॉजी के बारे में लोगों की अवधारणा से बन गई है और लोगों ने भारत के ज्ञान को महत्व देना ही बंद कर दिया है।

पं. दीनदयाल उपाध्याय ने चंद्रगुप्त को अपने उपन्यास का नायक इसलि, भी बनाया है चंद्रगुप्त वास्तव में आज की पीढ़ी के लिए युवक, युवकों के लिए एक आदर्श बन सकते है और है भी पं. दीनदयाल उपाध्याय ने चंद्रगुप्त के जीवन के एक–एक ऐतिहासिक प्रमाणों और संदर्भों का अध्ययन किया है तभी तो उन्होंने लिखा है–''यदि हम इसका पूर्ण विवरण जानना चाहते हैं तो हमको सम्राट् चंद्रगुप्त मौर्य के प्रधानमंत्री, सहयोगी एवं गुरु विष्णुगुप्त कौटिल्य के अपूर्व ग्रंथ अर्थशास्त्र को पढ़ना चाहिए। इसमें उन सब विषयों का वर्णन है, जिनसे कोई भी राष्ट्र शक्तिशाली हो सकता है। इसमें किसी तत्त्ववेत्ता की मन सृष्टि के काल्पनिक सिद्धांत नहीं हैं, किंतु एक सूक्ष्मदर्शी, यथार्थवादी विचारक तथा क्रांतिकारी कर्मयोगी के विचार हैं। राष्ट्र के उत्थान–पतन के कारणों की विवेचना करके स्वयं राष्ट्र–निर्माण करने वाले कूटनीतिज्ञ तपस्वी के अनुभूत प्रयोग हैं, मनोविज्ञान, राजनीति और अर्थनीति के वे सिद्धांत हैं, जो व्यवहार की कसौटी पर कसे जा चुके हैं। एक विद्वान् के अनुसार यह ग्रंथ उनकी ओर से देश को दिया हुआ अधिकार–पत्र है, हमारे लिए उपयोगी ज्ञान का भंडार है।''[12]

पं. दीनदयाल उपाध्याय ने सम्राट अशोक के द्वारा अपनाये गए विश्व कल्याण के रास्ते का जिसकी सभी ने प्रशंसा की थी को आगे बढ़ाने का श्रेय सम्राट चंद्रगुप्त को ही दिया था। चंद्रगुप्त का राज्य रामराज्य से कम न था। उसका राज्य एक सोशल वेलफेयर स्टेट था जिसकी कल्पना बाद में महात्मा गांधी जी ने की थी उसके राज्य में चारों तरफ सुख–शांति थी–''वैसे तो भारतभूमि सदा ही सोना उगलती रही है, परंतु सम्राट् चंद्रगुप्त मौर्य के काल की शांति और व्यवस्था के कारण तो यह भूमि सचमुच रत्नगर्भा हो गई थी। चारों ओर सुख और संपन्नता का राज्य था। सम्राट् चंद्रगुप्त मौर्य एवं चाणक्य के राष्ट्रीय प्रयत्नों के फलस्वरूप ही भारत महती शक्ति का संपादन कर सका, जिसके भरोसे सम्राट् अशोक ने राष्ट्रीयता से आगे बढ़कर विश्वकल्याण के मार्ग पर पग बढ़ाया। इस राष्ट्रशक्ति के निर्माता चंद्रगुप्त और चाणक्य में से अपने भुजबल का आश्रय लेकर प्रत्यक्ष पराक्रम करने वाले तथा अंत

में इस शक्ति के केंद्र–स्वरूप संसार के सामने प्रकट होने वाले सम्राट् चंद्रगुप्त मौर्य का यह पावन चरित्र है।''[13]

अतः यह उपन्यास हिंदी उपन्यास परम्परा में औपन्यासिक दृष्टि से उच्च कोटि का है यह जयशंकर प्रसाद के उपन्यासों की परंपरा की अग्रिम कड़ी प्रतीत होता है। उपन्यास राष्ट्र निर्माण नवयुवकों नई पीढ़ी के लिए प्रेरणा स्रोत व प्रकाश स्तंभ है और निश्चित रूप से पं. दीनदयाल उपाध्याय का एक नवीन सृजन है हिंदी साहित्य को एक अमूल्य देन है।

दीनदयाल उपाध्याय के व्यक्तित्व के इस पक्ष से कम ही लोग अवगत होंगे कि वे हिन्दी के एक प्रबुद्ध लेखक थे। मैं उन्हे चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, सरदार पूर्ण सिंह आदि लेखकों की श्रेणी में मानते हैं। इन्होंने क्रमशः कम से कम परन्तु उच्चकोटि का लेखन कर हिन्दी जगत में अपनी ख्याति अर्जित की। चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' कहानी हिन्दी की उच्चकोटि की कहानी मानी जाती है। इसी प्रकार सरदार पूर्ण सिंह के छः निबन्ध हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि माने जाते हैं। मैं पं. दीनदयाल उपाध्याय को जयशंकर प्रसाद की परम्परा का लेखक मानते हैं–उन्होंने अपनी रचनाओं में भारतीय अतीत का गुणगान किया है। पं. दीनदयाल उपाध्याय एक ऐसे उच्चकोटि के लेखक हैं जिन्हें स्वाभिमान भारत शृंखला का शिरोमणि माना जा सकता है। उन्होंने भावी पीढ़ी के निर्माण की प्रक्रिया में, लेखन कार्य व पठन कार्य को खूब महत्व दिया लोग भावी पीढ़ी को अच्छा पढ़ाये, राष्ट्रीयता, भारतीयता पढ़ाये पं. दीनदयाल उपाध्याय का समाज दर्शन राष्ट्र के लिए ही अपने जीवन का त्याग कर देना है। उनके अनुसार राष्ट्र के अलावा जीवन में अन्य कार्य दूसरे क्रम पर आता है इसी को ध्यान में रखकर उन्होंने भारतीय युवकों के निर्माण के लिए रचना का हिंदी भाषा में सृजन किया।

हिंदी साहित्य में अनेक ऐसे साहित्यकार हुए है जिन्होंने राष्ट्रीय चेतना जगाने के लिए महत्वपूर्ण कृतियों का सृजन किया इस शृखला में प्रताप नारायण मिश्र, भारतेंदु हरिश्चंद, जयशंकर प्रसाद, प्रेमचंद, रामधारी सिंह दिनकर, मैथिलीशरण गुप्त आदि का नाम अग्रगण्य है। इसके अलावा हिंदी सहित्य में बहुत कम रचनाएं लिखकर अमर होने वाले लेखकों में चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, सरदार पूर्ण सिंह आदि विश्व प्रसिद्ध लेखक है। इसी प्रकार के लेखकों में पं. दीनदयाल उपाध्याय भी सम्मिलित किये जा सकते है पं. दीनदयाल उपाध्याय ने सम्राट चन्द्रगुप्त तथा जगतगुरु शंकराचार्य दोनों राष्ट्रीय उपन्यास लिखें। हम पं. दीनदयाल उपाध्याय को बाल साहित्यकार भी मान सकते हैं उन्होंने संघ के कार्यक्रमों में आने वाले बालकों तथा युवाओं को ध्यान में रखकर क्रमशः 'सम्राट चन्द्रगुप्त' और 'जगत्गुरु शंकराचार्य' उपन्यास लिखें। चन्द्रगुप्त उपन्यास में उन्होंने बाल स्वयंसेवकों के लिए राष्ट्रीयता तथा संस्कार विषयक विचारों का व्यक्त किया है। उपन्यास के लेखन के बारे में निम्न पंक्तियों से स्पष्ट है–''अप्रैल 1946 की बात है, तब दीनदयालजी उत्तर प्रदेश के सह–प्रांत प्रचारक थे। एक प्रांतीय बैठक में तत्कालीन प्रांत प्रचाकर भाऊराव देवरस ने चिंता व्यक्त की कि शाखाओं में बाल स्वयंसेवक आते हैं, लेकिन हमारे विचार बालसुलभ भाषा में उपलब्ध नहीं हैं। वास्तव में बाल साहित्य की बहुत आवश्यकता है। दीनदयाल उपाध्याय ने यह बात सुनी और रात भर लिखते रहे, अगले दिन सुबह भाऊराव को पांडुलिपि सौंपते हुए बोले, 'देखिए, बाल स्वयंसेवकों के लि, यह पुस्तक कैसी रहेगी?'' एक रात में उन्होंने एक बाल उपन्यास लिख डाला। उनकी यह पहली पुस्तक 'सम्राट् चंद्रगुप्त के नाम से वर्ष प्रतिपदा 2003 (1946) को प्रकाशित हुई।

पं. दीनदयाल उपाध्याय ने यह उपन्यास मात्र एक रात में लिख डाला–''एक रात में उन्होंने बाल उपन्यास लिख डाला उनकी यह पहली पुस्तक सम्राट चन्द्रगुप्त के नाम से प्रकाशित हुई। इसके बाद यह उपन्यास भारत प्रकाशन, नागपुर और लोकहित प्रकाशन, लखनऊ द्वारा प्रकाशित किया गया। इसके बाद प्रभात प्रकाशन द्वारा तथा एकात्म मानवदर्शन अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान द्वारा दीनदयाल उपाध्याय संपूर्ण वाङ्मय के खंड एक में भी संकलित किया गया है।

इस उपन्यास में क्रमशः चाणक्य और चन्द्रगुप्त की विजयगाथा और भारत के गौरव दूर अतीत का गान किया गया है। उपन्यास 'सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य' के ऊपर केन्द्रित है इसमें सम्राट चन्द्रगुप्त के माध्यम से पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने बालकों को भारतीयता के अतीत के गौरवशाली इतिहास को प्रस्तुत किया है तथा उससे प्रेरणा ग्रहण करने की राह बताई है। इसके अलावा उन्होंने इस उपन्यास में बालकों के हृदय में राष्ट प्रेम, राष्ट्रीय चेतना को जागृत करने राष्ट्र के प्रति स्नेह करने के प्रेरक तत्वों का भी सरल माध्यम से प्रस्तुतिकरण किया है।

उपन्यासकार में राष्ट्र निर्माण के बाधक तत्त्वों के उखाड़कर फेंकने की बात भी प्रमुखता से रखी है। राष्ट्र का निर्माण व समृद्धता मात्र कुशल राज पर ही निर्भर है। परन्तु विलासी राजा इस वैभवशाली राज्य को नष्ट ही कर देते हैं। भारत प्राचीनकाल में अत्यन्त समृद्ध था तभी तो सोने की चिड़िया कहा जाता था–काल का हम वर्णन कर रहे हैं, तब से अब तक पृथ्वी सूर्य के चारों ओर लगभग ढाई हजार चक्कर लगा चुकी है और इसी की भांति भारत का भाग्यचक्र भी न मालूम कितनी बार घूम चुका है। उस समय मगध में महापद्म नंदों! का राज्य था। भारत स्वतंत्र था, यहाँ का व्यापार खूब बढ़ा–चढ़ा था। यहाँ के बने हुए माल से देश–विदेश के बाजार पटे पड़े थे। हिंदू शिल्पियों के हाथ में कुछ ऐसी सफाई थी, कुछ ऐसा जादू था कि जिस चीज को वे बनाते थे, वही सबका मन मोह लेती थी। राजा भी यहाँ के कला–कौशल तथा व्यापार को खूब प्रोत्साहन देता था। क्यों न देता? इससे लाभ तो उसके राज्य और देशवासियों का ही होता था। इस बड़े हुए व्यापार के कारण देश में खूब धन था। राजकोष भी भरा पड़ा था। राजा के पास दस पदम2 रुपया होने के कारण ही उसका नाम 'महापद्म नंद' पड़ा था। अपनी उँगली पर इकाई गिनकर देखो तो और सोचो कि कितना था वह महापद्म रुपया! आज अगर दुनिया के सब आदमियों को यह रुपया बाँटा जाए तो एक–एक आदमी के पास 50 लाख रुपया होगा और अकेले हिंदुस्थान में ही बाँटा जा, तो हममें से हर एक को 2.5 करोड़ रुपया मिले। ओह! कितना होगा वह धन! और कितने सुखी थे, उस समय के स्वतंत्र हिंदुस्थान के लोग।''[14]

आज तो हिंदुस्थान में लखपति ही गिनती के हैं, फिर करोड़पतियों का तो पूछना ही क्या! बाकी तो हमारी साल भर की आमदनी कुल 56 रुपया ही है। इस वैभवशाली मगध राज्य की राजधानी थी कुसुमपुर। यह वही है, जो आज पटना कहलाता है। उस समय इसका नाम कुसुमपुर था, बाद में यहीं पाटलिपुत्र बसाया गया, जो बाद में बिगड़कर पटना हो गया। कुसुमपुर वास्तव में कुसुमपुर ही था। जैसे भौंरे पुष्प की सुगंध से आकर्षित होकर उसके चारों ओर मँडराते रहते हैं, उसके गुणगान का गुंजन करते हैं, उसके गौरव के गीत गाते हैं तथा कुसुम के रस का पान करके अपनी इच्छा को तृप्त करते हैं, उसी प्रकार कुसुमपुर के वैभव तथा व्यापार के कारण दूर–दूर के यात्री और व्यापारी वहाँ आते थे, उनका सदा ही जमघाट लगा रहता था। वहाँ के सौंदर्य को देखकर अपनी आँखों को तृप्त करते, वहाँ के व्यापार से अपनी अभिवृद्धि करके अपनी इच्छाओं की पूर्ति करते तथा जहाँ भी जाते, कुसुमपुर की कला और उसके धन की कहानी अपने साथ ले जाते। देश–विदेश के राजदूत भी इस राजा के दरबार में उपस्थित होना अपना सौभाग्य समझते थे।

संदर्भ सूची

1. राष्ट्रीय आन्दोलन, मिश्र ओ. (2021), दिव्यांग साहित्य अकादमी, पृष्ठ–24
2. उपाध्याय, दीनदयाल (पं.) दीनदयाल उपाध्याय, संपूर्ण वाड्मय, खंड–एक, संपादक डॉ. महेश चन्द्र शर्मा, एकात्म मानवदर्शन अनुसंधान वं विकास प्रतिष्ठान, प्रभात प्रकाशन, 2016, दिल्ली, पृष्ठ–107
3. वही, पृष्ठ–111
4. वही, पृष्ठ–120
5. वही, पृष्ठ–112
6. वही, पृष्ठ–113
7. वही, पृष्ठ–114
8. वही, पृष्ठ–115
9. वही, पृष्ठ–116
10. वही, पृष्ठ–117
11. वही, पृष्ठ–118
12. वही, पृष्ठ–119
13. वही, पृष्ठ–112
14. वही, पृष्ठ–117